ऋग्वेद ओ३म् यजुर्वेद

सामवेद अथर्ववेद

वेदाङ्ग

आर्य प्रतिनिधि सभा फीजी - प्रचार कमीटी

Arya Pratinidhi Sabha Fiji

P.O. Box 4245, Samabula.

Phone / Fax 386044

जुलाई - सप्तम्बर प्रकाशन २०००

अक २६

संस्कार

वानप्रस्थ आश्रम

आज का मानव गृहस्थ जीवन से ऐसा बँधा है कि उसका मन इसे छोडना ही नही चाहता। घर छोडते हुए उसे बडा दुख होता है। लोग इसमें पडे पडे अपना सारा जीवन बिता देते हैं। ऋषियों ने आश्रम शब्द का अर्थ एक पडाव (camp) माना था। उन्होंने जीवन को एक यात्रा माना था और उस यात्रा के चार पडाव बनाए थे। इनमें पहला पडाव था ब्रह्मचर्य आश्रम। उसके बाद गृहस्थ की यात्रा शुरू करते थे। इसके बाद एक और पडाव आता था। गृहस्थी घर को छोडकर आगे चल देता था। आज लोग आश्रम व्यवस्था को भूल गए, इसलिए गृहस्थ आश्रम में फसे रहते हैं। इससे निकल कर आगे चलने का नाम ही नही लेते। गृहस्थ आश्रम में ऐसे जमते हैं मानों हमें अनन्त काल तक जीना है। गृहस्थ में आकर सब भूल जाते हैं कि हमें इस में से निकलना है - आगे जाना है। वैसे तो जो यहाँ आया है उसे जाना ही पडेगा, परन्तु गृहस्थ एक ऐसा चक्रव्यूह है, जिसमें मनुष्य अभिमन्यु की तरह प्रवेश तो कर लेता है, पर उसमें से निकलना नही आता। मनुष्य अन्तिम श्वास तक ससार ही की चिन्ताएँ करता रहता है।

ऋषियों का कहना है कि पचास वर्ष की उम्र अथवा पुत्र के सन्तान उत्पन्न होने पर घर -गृहस्थी को पुत्र को सौप कर अपने जीवन की अगली यात्रा प्रारम्भ कर दो, परन्तु लोग आज ऐसा नही करते। सराय (Inn) में ठहरने का एक नियम होता है कि पाँच - सात दिन से अधिक नही ठहर सकते। यदि कोई सराय में ठहरता है तो पहले सराय का प्रवन्धक उसे

इशारे से समझाता है, पर कोई उससे इशारा पाकर भी न जाए तो उसे स्पष्ट कह देता है। फिर भी न जाए तो प्रवन्धक उसका समान उठाकर बाहर फेंक देता है।

आज जो लोग गृहस्थ को छोडकर अगले राह पर चलने की अवस्था में पहुँच गए हैं, वे अपने अन्दर झाँक कर देखें कि उनके साथ घर में सराय के प्रवन्धक जैसा व्यवहार हो रहा है या नहीं? उन्हें उनकी पुत्रवधुए कोसती हैं कि बुड्ढा न जीता है न मरता है, इसने सारा घर को दुखी कर दिया है। सास-बहू का झगडा क्यों होता है? इसी लिए कि सास घर में ऐसे रहना चाहती है मानो वही बहू है। बुढापे में पिता भी पुत्रों को बोझ सा लगता है, क्योंकि वह भी आखरी दम तक लडको पर अधिकार जमाये रखना चाहता है।

अधिकतर परिवारों में झगडे होते रहते हैं। पिता-पुत्र, और सास बहू की लडाई हर रोज दिखाई देती है। ऋषियों ने वानप्रस्थ की व्यवस्था स्थापित करके इस समस्या को सुलझा दिया था। उन्होंने कहा था कि जब अन्त में ससार को छोडना ही है तो धक्के खाकर छोडने से अच्छा है, कि अपने-आप खुशी से छोड दें।

ससार में वस्तुओं का सग्रह और वस्तुओं का त्याग दोनों है। अपने-अपने समय पर दोनों ही ठीक हैं, परन्तु ससार की वस्तुओं से अपनी कामनाओं को पूर्ण करने के बाद, उन्हें छोडने का विचार भी आना चाहिए। आज के मानव समाज को वानप्रस्थ की भावना की आवश्यकता है। ससार की वस्तुओं में चिपकने के स्थान पर त्याग भावना की आवश्यकता है।

आज हम छोटी-छोटी चीजों से चिपक जाते हैं। यह जानते हुए भी कि हम असत्य मार्ग पर हैं, हम अपनी बात पर अड जाते हैं और फिर कुछ समय बाद वह हमारी इज्जत का सवाल बन जाता है। हम किसी कुर्सी पर बैठते हैं तो उससे चिपक जाते हैं। कई लोगो को इन कुर्सियों को छोडना कठिन लगता है। उन्हें ऐसा जान पडता है कि मानो यह कुर्सी उनके शरीर का भाग बन गई है।

इस समस्या से समाज को बचने का केवल एक उपाय है और वह यह है कि इस मानव-समाज में वानप्रस्थ की भावना जागृत की जाए। *वानप्रस्थ केवल वन मे चले जाने का नाम नही है, परन्तु वानप्रस्थ, त्याग और अपरिग्रह का नाम है। परिग्रह का अर्थ है चारो ओर से वस्तुओ को बटोरना और उसे समय आने पर स्वय छोड देना अपरिग्रह है।* क्या फल पक जाने पर स्वय वृक्ष को छोड कर अलग नही हो जाता? उसी तरह उचित समय पर व्यक्ति को गृहस्थ जीवन से अलग हो जाना चाहिये तथा वानप्रस्थ आश्रम की ओर कदम बढाना चाहिए।

वानप्रस्थ आश्रम का क्या अभिप्राय है? यह जानते हुए भी की एक दिन ससार को अवश्य छोडना है, आज नही तो कल और कल नही तो परसों। जब चलना ही है तब कहाँ की बुद्धिमत्ता है कि जब धक्के लगे तब चले, अपने आप चलने की न सोचे। वानप्रस्थ आश्रम विवश होकर गृहस्थ आश्रम को छोडना नही है, अपनी इच्छा से इसे छोड देना है। किसी से डरकर ससार से भागना नही, अपनी इच्छा से जीवन की यात्रा पर आगे चल देना है। एक पडाव (camp) को छोडकर दूसरे पडाव पर जाने की तैयारी करना है। जो बात होनी ही है, वह क्यों न हमारी इच्छा से हो? यदि हमारी इच्छा से हो, तो उसमें आनन्द होगा। यदि कोशिश करके कोई सदा के लिए ससार में रह सके तो ससार से चिपके रहना ठीक है, परन्तु जब यह असम्भव है तो क्यों न वह काम स्वय किया जाए जो अवश्य होना ही है? अर्थात् ब्रह्मचर्य आश्रम में जीवन सम्बन्धी सामग्री को बटोरते है तथा गृहस्थ में उसका प्रयोग करते है। जब गृहस्थ जीवन की मनोकामनाएँ पूर्ण हो जाती है तब सासारिक मोह माया से अलग होने का समय आ जाता है। इस की पूर्ति के लिए वानप्रस्थ आश्रम में जाना आवश्यक है। गृहस्थी तो सभी चलाते हैं, परन्तु वैदिक जीवन - व्यवस्था में गृहस्थ के अतिरिक्त दो अन्य आश्रम सबके लिए आवश्यक है-ब्रह्मचर्य तथा वानप्रस्थ। गृहस्थ के पहले ब्रह्मचर्य आवश्यक है और गृहस्थ के बाद वानप्रस्थ आवश्यक है। सन्यास सबके लिए आवश्यक नही था और न ही होना चाहिए। जब तक पूर्ण वैराग्य की भावना उत्पन्न न हो जाए तब तक सन्यास नहीं ग्रहण कर सकते।

पूर्वकाल में जब गृहस्थ लोग वानप्रस्थ आश्रम में प्रवेश करते थे, तब वे लोग अपने गाँव या नगर के बाहर के जगल में अपनी कुटिया बनाकर रहने लगते थे। प्रत्येक गाँव या नगर के बाहर इन वानप्रास्थियों की कुटियों की पक्ति रहती थी, गाँव या नगर मे बालक और युवा रहते थे और जगल मे वृद्ध वानप्रस्थ लोग रहा करते थे। ये लोग ससार में हर प्रकार का अनुभव प्राप्त कर चुके होते थे, हर काम जानते थे। युवक, गृहस्थ आश्रम में आकर जीवन-सग्राम के नया अनुभव प्राप्त कर रहे होते थे, इसलिए उन्हें इन वृद्धों की आवश्यकता पडती थी। समय-समय पर गृहस्थी लोग वानप्रस्थियों के पास जाते रहते थे और उनसे उपदेश सुनकर फिर अपने काम में लग जाते थे। जब कोई विकट समस्या सामने आती थी, तब भी ये गृहस्थी लोग उन वृद्ध जनों के सामने रखते थे और वे इन समस्याओं का समाधान किया करते थे। जब कभी गृहस्थी लोग ससार की चिन्ताओं से दुखी होते थे, तब भी वे इनके पास जाकर आत्मिक शान्ति का उपदेश लेते थे।

हमारे फीजी देश मे वन मे जाने की कोई व्यवस्था नही है। इस स्थिति में वानप्रस्थ आश्रम की पूर्ति गृहस्थ मे रहकर ही पूरी की जा सकती है।

अगले अक मे पढिये सन्यास आश्रम